वर्ष 6 अंक 2

ISSN 2320-2874

दलित संवेग

अप्रैल – जून : 2017

सम्पादक – डॉ0 टी0पी0 'राही'

पीएच.डी., डी.लिट्.

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	विषय	लेखक	पृष्ठ सं0
1.	सम्पादकीय	डॉ0 टी.पी. राही	03
2.	प्रारब्ध (कहानी)	डॉ0 एम.डी. इंगोले	04
3.	ग़ज़ल	डॉ0 सुरेश उजाला	12
4.	सतह से उठते हुए (कविता)	डॉ0 एन0 सिंह	12
5.	कबीर साहित्य में नारी का स्वरूप	डॉ0 पूनम निर्मल	13
6.	21वीं सदी के नाटकों में व्यक्त लोकगीतों का मर्म	डॉ0 संगीता	19
7.	हिन्दी दलित साहित्य और भारतीय व्यवस्थाओं में अछूत (पिछले अंक का शेष)	डॉ0 टी.पी. राही	22
8.	स्वामी अछूतानन्द पर संगोष्ठी	सोहन लाल 'सुबुद्ध'	28
9.	'सुबुद्ध' के सरसी	सोहन लाल 'सुबुद्ध'	28
10.	मातादीन बलिदान दिवस/महापदमनन्द पर संगोष्ठी	सोहन लाल 'सुबुद्ध'	29
11.	शिक्षा के प्रति जागरुकता के लिए नई पहल	सुन्दर लाल अहिरवार	30
12.	हमारा मसीहा	मनोहर लाल प्रेमी	31
13.	अम्बेडकर जयन्ती श्रृंखला	डॉ0 टी0पी0 राही	32

प्रारब्ध

❑डॉ0 एम0डी0 इंगोले

मैं यह जो कहानी कहने जा रहा हूँ वह कोई दादा-दादी या नाना-नानी की कहानी कीं तरह नहीं है। और ना ही यह कोई कपोल कल्पित कल्पना विलास है। यह यथार्थ के धरातल पर रची-बसी कहानी है। मात्र इसके चरित्र यथार्थ होने पर भी इनके कुछ नामकरण प्रतीक स्वरूप है। इनके जैसे चरित्र समाज में और भी हो सकते हैं। यहाँ पर यह बात मैं मुख्य रूप से उजागर करना चाहता हूँ कि एक ही व्यक्ति के जीवन में इतनी सारी अनपेक्षित अनहोनी घटनाएं उसके जीवित होते हुए आंखों के सामने कैसे घटित हो सकती हैं। एक के बाद आघात उनके परिवार पर ही कैसे हो सकते हैं? इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती और ना ही कोई कर सकता है।

बड़े चाचा लक्ष्मण का हँसता-खेलता भरा पूरा परिवार था। ना जाने इसे किसकी नजर लग गई, पता नहीं या यूँ कहें कि कुदरत का ही यह प्रकोप था। उनके आगे किसी की भी नहीं चलती है। इसके दुष्ट चक्र से कोई बचा है भला। मैं बहुत छोटा था, जब बड़ी चाची चल बसीं। उनकी धूँधली-सी छवि मेरी स्मृति में उभरती है। वह जब चल बसीं तब बड़े चाचा लक्ष्मण का हँसता खेलता, भरा-पूरा परिवार था। चार लड़कियां दो छोटे-छोटे लड़के, सबसे बड़ी बेटी सोनाई, उसके बाद गुणवती और तीसरे नम्बर की निलावती चौथे नंबर का बेटा महादेव, पाँचवे नंबर की कलावती और सबसे छोंटा बेटा गंगाराम। लड़के तो लड़के लेकिन लड़कियाँ भी दिखने में एक से बढ़कर एक सुन्दर थी। किसी को भी कहीं नाम रखने की जगह नहीं थी। बड़ी सोनाई और गुणवती दोनों गौर वर्ण की, तीखे नयन, नुकीले नाक और छरहरे बदन की। तिसरी निलावती भी वैसी ही किन्तु मात्र उसका रंग गेहुँआ। और छोटी कलावती थोड़ी साँवली-सी, किन्तु वह भी किसी दृष्टि से कम नहीं थीं। अपने बच्चों की खातिर बड़े चाचा लक्ष्मण ने अपनी पहाड़ जैसी जिंदगी विधुरता में ही व्यतीत की। स्वभाव से सोनाई सोने जैसी ही सुन्दर गुणवती नाम के जैसी ही गुणवान, निलावती गाय जैसी एकदम गऊ स्वभाव तथा भोली-भाली थी और सबसे छोटी कलावती बड़ी ही चंचल, हंसमुख एवं बतरस में माहिर थी। इन बच्चों के सिर से माँ की ममता का साया जैसे ही उठ गया, वैसे ही इनके जीवन पर दुःख और यातनाओं का पहाड़ टूट पड़ा। इन मातृ साया से वंचित बच्चों को देखकर सभी परिजन विव्हल होकर पिघल जाते और उनके प्रति सहानुभूति प्रकट करते। किन्तु उनकी सूखी ममता किस काम की। बड़े चाचा के पास उपजीविका का कोई साधन नहीं था। थी तो बस एक भैंस। जिस के सहारे छोटा-मोटा व्यवसाय-ब्यौपार बड़े चाचाजी किया करते थे और अपना परिवार चलाते।

कुछ लोग कहते हैं, बड़े चाचाजी अपनी युवावस्था से ही बड़े ही ठाठ-बाँट से रहते थे। दादाजी को रजाकारी के दिनों में (मराठवाड़ा में जब मुस्लिम शासन था) इनाम में बीस एकड़ अच्छी-खासी उपजाऊ खेती मिली थी। बड़े चाचाजी का एक भाई याने पिताजी उस खेती में काम किया करता था। और दूसरा छोटा भाई मारूती याने छोटे चाचाजी गाँव के ही किसी किसान के यहाँ सालाना बंधक के रूप में काम किया करते थे। बड़े चाचाजी ठाठ-बाट से रहते

और गाँव-गाँव घूमते तथा मेहमानों के यहाँ हमेशा आते जाते रहते थे। उनकी पोशाख भी बड़ी किमती होती थी। वे मलमल की धोती और मलमल का कुर्ता पहनते थे। और पाँवो में चरमराते चूते तथा पारकोल याने कोसले की पगड़ी पहना करते थे। उनका रंग गोरा कद पाँच-साड़े पाँच फिट, हाथ में बेत की छड़ी, बड़ी-बड़ी मुंछे, कुल मिलाकर बहुत ही आकर्षण व्यक्तित्व उनका था। सगे संबंधियों में उनका बड़ा ही मान सम्मान एवं रूतबा था। जाति-बिरादरी के लड़के -लड़कियों की सगाइयाँ करने या उनके रिश्ते जोड़ने में वे बड़े मशहूर थे। गाँव के किसी के भी लड़के या लड़की की शादी हो या उसकी सगाई हो उस में बड़े चाचाजी न हो ऐसा कभी हो ही नहीं सकता था। मेरी सगाई में भी वे ही मुखिया थे।

हमारे पड़ोस के गाँव चिंचोली के रंजित देशमुख के साथ बड़े चाचाजी की अच्छी-खासी दोस्ती थी। उस समय रंजिस देषमुख जिंतूर तहसिल-पंचायत समिति के सभापति थे। लोग कहते हैं बड़े चाचाजी ने हमारी सारी खेती उनको कसने के लिए दे दी थी। बाद में पीनक में (नशे में) बड़े चाचाजी से सभापति महोदय ने हमारी खेती अपने नाम लिखवा लिया पता नहीं बड़े चाचाजी ने बेच दी, कह नहीं सकते। मैं समझदार होने पर जब यह सब जान गया और जब भी उस खेती से गुजरता था, तो अपने परिवार के गत वैभव की कल्पना करता था। उस जमीन में मूंगफली, गेहूँ, जवार, कपास, केली ऊख कोई भी फसल हो अच्छी तरह से उग आती थी। आज भी जब मैं गाँव जाते समय उस जमीन में से गये रास्ते से गुजरता हूँ, तो अपनी बीबी से उस जमीन का जिक्र करता हूँ। उस जमीन की बावड़ी में आज भी पांच हॉर्स पावर की पानी की मोटर चौबीसों घण्टे चलती रहती है। यह सब देखकर मैं अपना कलेजा मसोसकर रह जाता हूँ। मैं सोचता था काश ये जमीन हमारे कब्जे में होती तो मेरे परिवार को मजदूरी करने की नौबत ही न आती।

बड़े चाचाजी बहुत ही सख्त मिज़ाज, घाघ और दबंग व्यक्ति थे। चिंचोली के ही धनगर समाज के जिवाजी भाऊ से भी चाचाजी की बड़ी अच्छी दोस्ती थी। जिवाजी भाऊ धनगर समाज के होने के कारण उनके पास अच्छी खेती तो थी और साथ ही वे भेड़-बकरियाँ पालते और संभालते थे। उनके यहाँ अगर कोई भेड़ या बकरी मर जाती तो बड़े चाचाजी उसे अपने कंधे पर डालकर घर ले आते और उसे काटकर उसके हिस्से बनाते तथा महारों में बाँटते। अगर हिस्से बच गये तो वे बबूल की डाल काटकर लाते और उस पर बचे गोश्त की बोटियाँ आंगन में धूप में सूखाने डालते और सूखने पर उसे बड़े मिट्टी के घड़े में भरकर रखते। उन बेटियों को बरसात के दिनों में घर में खाने के लिए कुछ न होने पर बड़े चाचाजी के बच्चे बड़े ही चाव से उसे खाते थे। मात्र इसके लिए मेरा परिवार अपवाद था। मरे जानवरों का गोश्त खाना मेरे घर में परहेज था। पिताजी शुद्ध शाकाहारी थे। इसका एक यह भी कारण शायद हो सकता है कि पिताजी अच्छा भजन गाया करते थे। उन्हें सवर्ण हिंदुओं की भजनी मंड़ली में भी हार्मोनियम बजाने जाना पड़ता था। पिताजी का फैमिली प्लैनिंग का जब ऑपरेशन हुआ तब डॉक्टर की सलाह पर वे अंड़े मांस-मच्छली जरूर कभी-कभार खाने लगे। बड़े चाचाजी को बीड़ी और शराब का बड़ा शौक था। वो कभी-कभी बीड़ी सुलगाने के लिए चूल्हे से अंगार मंगवाते या मुंझे ही बीड़ी सुलगाने के लिए भेजते थे। तब में बड़े चाचाजी की नजर चुराकर बीड़ी के कुछ कश ले लेता था। इसी वजह से किशोरवस्था में मुझे बीड़ी के ठूंठ पीने की आदत लग गई थी, किन्तु किसी कारणवश वह तुरन्त छूट गई। बड़े चाचाजी महुए की शराब अपने घर पर ही

निकाल लेते थे और उसे बेचते थे। कभी-कभी अपने सवर्ण हिन्दू दोस्तों के साथ घर पर ही शराब पीते बैठते थे। कभी कभार वे कप में थोड़ी-सी शराब भरकर मुझे दे देते और कहते, "ले ले बेटा! पी ले! बड़ी अच्छी दवा हैं।" तब मैं उसे पीने की कोशिश करता, किन्तु वह इतनी कड़वी एवं जहरीली होती कि मुझे गले से नींचे नहीं उतरती थी। मुझे इसीलिए शराब कभी अच्छी नहीं लगी और ना ही मैं उसके कभी आदी बना।

दाबाजी ने अपने लड़कों-लड़कियों के नाम बहुत ही अच्छे सुसंस्कृत रखे थे। बड़े चाचाजी का नाम लक्ष्मण, छोटे चाचा का नाम मारूती, पिताजी का नाम द्रौपद (अपभ्रंश-धुराजी), बड़ी बुआ का सुंदरा और छोटी बुआ का इंदिरा। बडे चाचाजी ने अपने बच्चों के नाम भी इसी तरह अच्छे-अच्छे रखे। उस समय महार दलितों में बच्चों के नाम बहुत ही गंदे-गंदे रखे जाते है। जैसे- कचन्या, धोंड़या (पत्थर), उकंड़या (कूड़ा) आदि। कुछ महारों के नाम के पीछे नाक, प्रत्यय लगाया जाता था। जैसे रामनाक, भिवनाक, भिमनाक, उकंड़नाक आदि। महार व्यक्तियों के नामों के पीछे नाक यह प्रत्यय लगाया जाना उनके नागवंशी होने का हमें संकेत देता है। यहाँ एक और बात भी मैं प्रकट रूप व्यक्त करना चाहूँगा कि उन दिनों कुछ हद तक आज भी देहातों के महार (आज के बौद्ध) दलितों के कितने भी अच्छे नाम क्यों न रखे हो, फिर भी उनके नामों को सवर्ण हिन्दू विकृत करके ही पुकारते हैं। बड़े तो बड़े छोटे बच्चे भी स्वर्ण-हिन्दूओं के लोग दलित लोगों से अवमान या अपमान सूचक भाषा में बात करते हैं। वे उमर का भी लिहाज नहीं करते हैं। आजकल इसमें थोड़ी-सी तब्दीली आई है।

जैसे-जैसे समय बीतता गया वैसे-वैसे समय के साथ बड़े चाचाजी के बच्चे बड़े होते गए। सब की उन्होंने समय समय पर शादियाँ भी कर दीं। बीस पच्चीस साल का समय गुजरता गया। कहते हैं होनी को कौन टाल सकता है। बड़े चाचाजी के परिवार पर एक एक करके आघात पर आघात होते गए। उन पर दुःखों के पहाड़ टूट-टूट कर गिरते चले गए।

बड़े चाचाजी ने बड़ी बेटी सोनाई की शादी जिले के भीतर ही रांजाला के एक सुशील लड़के लक्ष्मण से कर दी। वह एक स्कूल में अध्यापक था। दूसरी बेटी गुणवती की शादी भी जिले में ही टेंभूर्णी नामक गांव के अच्छे सुंदर होनहार किशन नामक लड़के से कर दी, जो राज्य परिवहन महामंडल में बस ड्राइवर था। बाद में कलावती की शादी भी उसी की भाई बंदकी में लक्ष्मण नामक लड़के से कर दी। वह खेतों में बावड़ियाँ खोदने का काम किया करता था। तीसरे नंबर की लड़की निलावती की शादी बहुत ही दूर गाँव काली (दौ.खान) जो पूसद जिले-विदर्भ में की। दूल्हा दत्ताजी दामाद भी बस ड्राइवर था। यह एक संयोग ही था कि बड़े चाचाजी का नाम और दो दामादों का नाम एक ही था। उसी गाँव में बड़ी बुआ सुंदरा की भी शादी हुई है। टेंभूर्णी गाँव को महाराष्ट्र के आंबेडकारी आंदोलन के इतिहास में विशेष महत्व है। सत्तर से लेकर नब्बे के दशक तक इस गाँव को हर साल दिसंबर महीने में यशवंत बाबा के नाम पर बहुत बड़ा मेला लगता था। पास पड़ोस के सभी जिलों से बौद्ध यहाँ मेले के निमित्त अपने परिवार समेत आते थे। सुबह यशवंत बाबा की पूजा के बाद उनकी प्रभात फेरी गाँव में होती थी। बाद में पंचशील ध्वजारोहन के साथ पंचशील त्रीशरण होता था। फिर अनेक वक्ताओं के भाषण आंबेडकरी आंदोलन एवं धर्मांतरित बौद्धों के परिवर्तन को लेकर होते थे। उसके उपरान्त सामायिक भोजना होता था। इस मेले में बौद्धों की भजन मंडलियाँ भी दूर-दूर के गाँवों से आती थीं। मैं भी जब किशोर अवस्था में था तब

अपने गाँव की 'नवयुवक पंचशील गायन पार्टी के साथ आता था। मेरे पिताजी उस वक्त भजनी मंडल के मुख्या और हार्मोनियम मास्टर थे। रात भर भजनी मंडलियों का बारी-बारी से भीम-बुद्ध गीतों का कार्यक्रम संपन्न होता था। एक विशेष बात इस मेले में होती थी, वह यह थी कि दूर दूर गाँव से आये बौद्ध बांधव अपने लड़के-लड़कियों की सगाईयाँ भी इसी अवसर पर किया करते थे। नियति ने पहला आघात गुणवती पर किया। उसकी शादी का एक साल हुआ था। एक दिन मनहूश खबर मिली उसके पति किशन के एक्सीडेंट की। वह तो खबर सुनकर अपने होशो हवास खो बैठी। दूसरे दिन सुबह उसके पति की लाश लेकर वैन पहुँची। घर परिवार में पूरा मातम ही मातम छाया हुआ था। गुणवती के सर से माँ का साया तो पहले से ही उठ गया था। वह किस की गोद में अपने सर रखकर दुःख बिसारती। दुःखों से उबरना उसके लिए बड़ा मुश्किल था। उसे कोई संभालने वाला था तो बस उसी गाँव में ब्याही गई बड़ी बुआ थी। वह हर सुख, दुख में अपनी भांजी का साथ देती, उसे सांत्वना देती, ढ़ाड़स बँधाती। कई दिनों तक गुणवती अपने पति की मधुर स्मृति में खोई खोई-सी रहती और एकांत में घंटो रोया करती थी। उसके गाँव में मेला हर साल लगता था। मैं किशोरावस्था में उस मेले के लिए जब पैदल जाता था, तब उसके ही घर पर ठहरता था और वो मुझे बड़े ही लाड़-प्यार से खाना खिलाती थी। सगे भाई के समान मुझ से प्यार भरी बातें किया करती थी।

कुछ ही महीनों बाद गुणवती ने एक सूरजमुखी सुंदर बालक को जन्म दिया। उसका नाम भी वैसा ही रखा गया, 'सुरजभान'। उसके पति की जब ॲक्सिडंट में मौत हुई थी तब वह गर्भवती थी। बच्चे के जन्म से उसके जीवन में सुख एवं आशा का अंकुर पल्लवित हुआ। मानों उसके सूखे पेड़ पर बसंत की-सी हरियाली लहलहा आई। वह इस सुकुमार बालक का मुख देखकर अपने सारे गम भूलाती। फिर भी उसके सामने पहाड़ जैसी जिंदगी थी। अपनी ऊबलती हुई जवानी को उसने पूरी तहर दबा दिया था। घरवालों ने सगे-सम्बधियों ने उसे दूसरी शादी करने के लिए कई दबाव डाले किन्तु वह टस से मस नहीं हुई। बड़े चाचाजी ने भी उसके लिए कई रिश्ते ढूंढ-ढूंढ़ कर लाये किन्तु वह शादी के लिए राज़ी नहीं हुई। मानों उसने अपना पूरा जीवन विधवा के रूप में ही बिताने और जीवन से लड़ने का संकल्प किया था उसके पास उपजीविका का साधन तो कोई था नहीं। पति की अस्थाई और नई-नई नौकरी होने की वजह से उसे एस0टी0 महामण्डल से कुछ भी पढ़ी-लिखी होती, तो उसे अनुकंपा के आधार पर कुछ छोटी-मोटी-सी तो भी नौकरी मिल सकती थी और वह अपने कदमों पर खड़ी रह सकती थी, किन्तु अब उसे अपना पूरा जीवन दूसरों की खेती में मजदूरी करके ही गुजारना था।

गुणवती की अपनी विधवा सास से कभी नहीं पटती थी। वह अपने बेटे की मौत के पीछे बहु की ही मनहूसियत मानती और उसे आये दिन कोसती रहती थी। उसके देवर श्रीपती का मात्र उसके प्रति बड़ा ही अनुराग था। वह अपनी भौजाई को किसी भी प्रकार से दुःखी नहीं देखना चाहता था। इसलिए वह चाहता था कि गुणवती दूसरी शादी करके अपना फिर से नया घर बसाये। किन्तु उसके फैसले के आगे किसी की एक न चली। उसके नाम के समान ही उसके गुणों की चर्चा गांव वाले किया करते थे। उसके सिर से आंचल कभी भी नहीं ढ़लता था। उसके कदम नेक राह के कभी नहीं डगमगाये। उसका देवर सातवीं-आठवीं पास था। उसकी पति की जगह देकर को नौकरी पर लिया गया। उसने भी अपनी भौजाई तथा भतीजे के प्रति पूरा फर्ज निभाया। जैसे जैसे हीं

भतीजा बड़ा होता गया वैसे पैसे-ही उसे पढ़ाया-लिखाया उसे अपने पैरों पर खड़ा होने के काबिल बनाया। उसने अपने भतीजे को कभी पिता की कमी महसूस नहीं होने दी।

कलावती का ब्याह होकर भी मुश्किल से एखाद साल ही हुआ होगा। उसकी शादी भी गुणवती के ही भाई बंदकी में हुई थी। उसका दूल्हा बड़ा ही होनहार एवं कमाऊ लड़का था। कलावती के भी अच्छे हँसी खुशी के साथ दिन बीत रहे थे। वह भी अपने पति के साथ बहुत खुश थी। उसका पति लक्ष्मण अपने तथा पड़ोसी गाँव वालों की खेती में बावड़ियाँ खोदने के काम लिया करता था। बावडियाँ खोदने वाले मजदूरों की उसके पास एक अच्छी टोली थी। यहाँ काम अक्सर धूपकाल के दिनों में ही किया जाता था। मई महिने की कड़कती धूप थी। लक्ष्मण ने अपने ही गाँव के एक जमींदार की बावड़ी खोदने का काम लिया था। एक दिन वह चिलचिलाती धूप में भरी दोपहर के समय मजदूरों की रोटियों के साथ बगल में बारूद का थैला लटकाये बावड़ी पर जा रहा था। जो बारूद बावड़ी में सुरंग लगाने के काम आता था। उस अंजान को तो भी भला क्या पता था कि वही बारूद उस दिन उसका काल बनेगा। पता नहीं थैली के भीतर का बारूद कैसे धूप से गरम हुआ और उसका अचानक विस्फोट हुआ। विस्फोट के साथ ही लक्ष्मण का दाहिना हाथ हवा में उछला और वह जमीन पर धड़ाम से गिर पड़ा। विस्फोट की आवाज सुनकर खेतों के आसपास के आखाडों पर से लोग भागते हुए आये। बेहोशी की हालत में बैलगाड़ी में डालकर लोग लक्ष्मण को गाँव तक ले आये। उसका खून बहुत अधिक बह चुका था। जब तक असे लेकर अस्पाताल ले जाने के लिए निकल पड़ते तब तक उसके प्राण पखेरू उड़ गये। बड़े चाचाजी उसी दिन अपने बेटियों को मिलने यहाँ पहुंचे थे। उनको क्या पता था कि उनका सामना बेटियों के यहाँ छोटे दामाद के मातम से होगा। उन पर यह नियति का दूसरा बड़ा आघात था। एक ही गांव में एक ही भाई बंदकी में ब्याही गई दोनों बहने भरी जवानी में एक ही अवस्था में विधवा हो गईं। नियति का भी यह खेल देखिए कि जो खेल गुणवती के साथ हुआ ठीक वही कलावती के साथ भी हुआ। क्यों कि कलावती भी अब कुछ ही महीने के गर्भ से थी। दोनों बहनें एक दूसरी की गले में बाहें डालकर विलाप करतीं। उन्हें संभालने के लिए बड़ी बुआ खूब प्रयास करतीं। बडे चाचाजी तो निढ़ाल हो गये। कलावती को तो दौरे पर दौरे पड़ते जा रहे, वह विक्षिप्त स्थिति में रहने लगी। मातमपूर्सी के बाद बडे चाचाजी अपनी दोनों विधवा बेटियों को अपने साथ गाँव ले आये। यहाँ तो भी उनकी सांत्वना करने वाला कौन था। गाँव वाले दोनों विधवा बहनों को देखकर विव्हल हो कर विधाता को लाख-लाख कोसते थे और दोनों विधवा बहनों की सलामती की कामना करते थे। खैर समय के साथ दोनों बहनों ने एक दूसरी को संभाला। कुछ ही महीनों बाद कलावती ने भी एक सलोने से बेटे को जन्म दिया। कलावती भी अपनी बड़ी बहन गुणवती के नक्शे कदम का अनुकरण किया। उसने भी अपना पूरा जीवन विधवा के रूप जीने का फैसला कर लिया।

निलावती अपने मायके से बहुत दूर गाँव में ब्याही गई थी। उसके देवर के साथ छोटे चाचाजी की बड़ी लड़की आवंतिका की शादी की गई थी। देवर भगवान भी एस0टी0 महामंडल में बस ड्रायव्हर था। कभी छोटे चाचाजी तो कभी बडे चाचाजी इन चचेरी बहनों की खोज खबर लिया करते रहते थे। दोनों चचेरी बहनों को इस दूर दराज के गाँव में सगे भाईयों के साथ इसलिए ब्याह दिया गया था कि दोनों बहनें मिलजुलकर हँसी खुशी के साथ रहेंगी। किन्तु

दोनों भी एक दूसरी की जान की दुश्मन बन बैठी। दोनों एक दूसरी का मुँह देखना तक मुनासिब नहीं समझती हैं। निलावती की अपनी बहनों से सालों साल भेट नहीं होती है। बड़े चाचाजी उसे मिलने साल में एकाध बार जरूर जाते हैं। निलावती को तीन लड़के और दो लड़कियां पैदा हुई। बड़ा लड़का साहेब अपाहिज पैदा हुआ। वह जैसे-जैसे बड़ा होता गया वीक्षिप्त-सा रहने लगा। कभी-कभी तो उस पर दौरे भी पड़ने लगते थे। उसका खूब इलाज किया गया। कई देवी-देवताओं की मनौतियां मनाई। कई जानकार और हकीमों को दिखाया गया, पर सब कोशिशे नाकाम रहीं। जब वह बीस-एक साल का हुआ तब एक दिन दौरे से ही चल बसा। उसके बाद हुई ऊषा और अनुसूया और बाद में संतोष और इंद्रजित पैदा हुए। बडे चाचाजी ने अपनी बेटी तथा दामाद को उषा की शादी कच्ची उम्र में ही करवाने लगाई। निलावती की जिन्दगी भी अच्छी खासी गुजर रही थी। बडे बेटे की तकलिफ से उसे और बेटे को भी अब छूटकारा मिला था। एक दिन अचानक उसके जीवन पर भी गाज गिरी। उसके दामाद के भाई में और दामाद में खूब लड़ाई-झगड़ा हुआ और दामाद ने खुद को जलाकर आत्महत्या कर ली। कितने बड़े संयोग की बात है देखिए कि निलावती के दामाद ने जब आत्महत्या कर ली तब उसकी बेटी भी पहली बार गर्भवती थी। उसकी बेटी उषा ने भी अपनी दोनों सगी मौसियों की तरह अपनी सारी जवानी इकलौती बेटी 'पल्लवी' के सहारे ही चलाई। मात्र इसके लिए एक अपवाद यह है कि उसकी मौसियां अपनी ससुराल में ही रहीं। किन्तु उषा ने अपने मायके में माँ-बाप तथा भाईयों के सहारे दिन बिताये और बीता रही है। बडे चाचाजी के जीवन में यह नियति का चौथा प्रहार था।

सोनाई गुणवती निलावती और बलावती ये चारों बहने अपने महादेव और गंगाराम दोनों भाईयों को बहुत चाहती थीं। बडे चाचाजी अधिकतर घर से बाहर-बाहर ही रहा करते थे। अतः वे अपने बेटों का खयाल न रख सके। उनका बड़ा बेटा महादेव दसवीं पास होने पर भी बिल्कुल निकम्मा और कामचोर तथा शराबी निकला। छोटा बेटा गंगाराम बाद में गृहस्थी में थोड़ा संभल गया। महादेव को दो लड़के और एक लड़की हुई। बड़ा लड़का बंटी, छोटा संटी और लड़की छाया। खैर निकम्मा और कामचोर शराबी बाप अपने संतानों की क्या खाक परवरिश करेगा। बंटी बचपन से ही अपने मामा के यहाँ पला-बढ़ा और मामा ने ही उसकी उधर ही शादी कर दी। बेटी छाया के लिए कुछ रिश्ते जरूर आये किन्तु लापरवाह बाप ने उसे नजर अंदाज कर दिया। वह खुद ही अपनी बीवी की मजदूरी के सहारे जी लेता था। एक दिन छाया ने भी अपना जीवन साथी खुद ही ढूंढ़ लिया। उसे गर्भ ठहरने पर घरवालें और जाति-बिरादरी के लोगों ने उसका ब्याह करा दिया। छोटा बेटा संटी कई दिनों तक घर में बीमार बिस्तर पर पड़ा रहा किन्तु ला-परवाह बाप के पास उसके इलाज के लिए कहा समय और पैसा था। एक दिन उधार पैसे लेकर उसे जिला अस्पताल में भर्ती किया गया, किन्तु तब तक समय हाथ से निकल चुका था। संटी की लाश जब घर लाई गई तब उसके पास रिक्शें के भाड़े तक के लिए पैसे नहीं थे। उसका भाड़ा मेरे छोटे भाई ने ही चुकाया। संटी की इस किशोरावस्था की मृत्यु पर मुझे रह रहकर एक बात याद आती है। हमारे गाँव में हमारे दूर के रिश्ते के मानिक मामा रहते हैं। उनके पास बहुत सी बकरियाँ हैं। एक दिन रात में महादेव और उसके दोस्त अर्जुन ने मिलकर मानिक मामा का बकरा चुराकर

काटकर खाया। सुबह जब मानिक मामा को एक बकरा अन्य बकरियों में कम दिखा, तो उसने उसे ढूंढ़ना शुरू किया। ढूंढ़ने पर बकरे की खाल अर्जुन के ही घर के पास ही मिली। जो कुत्तों ने वहाँ लाकर डाली थी। मानिक मामा को चोर को समझने में अधिक देर न लगी किन्तु वे हाथ मलते रह गये, कुछ न कर पाये। नदी पर सुबह कपड़े धोने गई मोहल्ले की औरतें इस वारदात की चर्चा करने लगीं, तब वहाँ उपस्थित महादेव की पत्नी भी उसमें सम्मिलित हुई। वह चोर को कोसने लगी-जिसमें भी मानिक बापू का बकरा काटकर खाया है, भगवान उसका कभी भला न करे! उसके बाल-बच्चों का कभी भला न होगा। शायद उसने दिया हुआ श्राप सच निकला। मानों भगवान ने उसकी सुन ली। और उसके किये की सजा भी दे दी। उस घटना के कुछ ही दिनों के बाद उसका छोटा बेटा संटी बीमार पड़ा और चल बसा। महादेव मुझ से उम्र में बहुत बड़ा होने पर भी एक बार मैंने उसे बहुत डांटा था। उस वक्त में हमारे तहसील शहर में माध्यमिक स्कूल में पढ़ रहा था। एक बार गांव आने पर उसने मुझे मेरी चप्पल उसे किसी फंक्शन में पहनकर जाने के लिए मांगी थी। मैनें उसे बहुत खरी-खोटी सुनाते हुए कहा, "अरे गधे"! तू अच्छा हट्टा कट्टा नौजवान है। दसवीं तक पढ़ा लिखा है। कोई छोटा-मोटा धंधा व्यवसाय कर मेहनत कर मजदूरी कर पैसे कमा, अपना परिवार अच्छा चला। एक अच्छे इंसान की तरह जीना सीख ले। मुझ जैसे स्कूली बच्चे को चप्पल मांगते हुए तुझे शरम नहीं आती? तूझे शराब पीने के लिए पैसे मिलते हैं, तू नंगे पांव घूमता है, अपने लिए एक चप्पल नहीं खरीद सकता? थू है तेरी जिन्दगानी पर! तब वह शरम के मारे बहुत पानी-पानी हुआ था।

बड़े चाचाजी को अपनी पत्नी की असामयिक हुई मृत्यु पोते की किशोरावस्था में मृत्यु नाती की युवावस्था में हुई मृत्यु बेटी निलावती के दामाद का शादी के एक साल के भीतर ही आत्मघाती निधन आदि की वेदना उतनी नहीं हुई थी जितनी कि अपनी जवान गुणवती और कलावती के पतियों की शादी के एक-एक साल के भीतर ही अकस्मिक अकल्पित अपघातों में हुई मौतों की हुई थी। बडे चाचाजी को दुखो के गहरे घावों को सहने की मानो आदत सी पड़ गई थी। शायद इन सभी आघातों से भी बड़ा हादसा वे देखने चाहते थे, या उस घड़ी का ही मानों इंतजार कर रहे थे। संभवतः वे कुदरत से कहना चाह रहे हो कि "तू चाहे मेरे जीवन में कितने भी हादसें कर ले! फिर भी मैं अट्टालिका की तरह अवाधित खड़ा रहूंगा।" और वह अंतिम हादसा हुआ जिसकी कल्पना उन्होने अपने सपने में भी कभी नहीं की थी।

सूरजभान अब बड़ा हो गया था। उसने विज्ञान में स्नातक की उपाधि प्राप्त की थी। वह नौकरी के लिए प्रयास कर रहा था। उस वक्त मैं अपने जिले के एक महाविद्यालय में हिन्दी अधिव्याख्याता के पद पर कार्यरत था। वहीं पर परिवार समेत ससुराल में ही रहा करता था। कभी-कभी सूरजभान मुझे घर पर मिलने आया करता था। वह बड़ा ही हँसमुख खुशमिजाज और विनोदप्रिय लड़का था। जब वह हमारे गाँव आता तब अक्सर उसका उठना बैठना, खाना-पीना हमारे ही घर पर अधिक होता था। उसके बुआ की लड़की संध्या इकलौती बेटी थी। उसके मां जैसी ही उसकी बुआ भी विधवा थी। संध्या ने अध्यापक की ट्रेनिंग पूरी की थी और एक स्कूल में अध्यापक बनी थी। हम सब संध्या के साथ उसकी शादी का जिक्र करते थे तब वह मजाक में कहता, नहीं रे भाई मैं

उससे शादी कतई नहीं करूँगा, क्योंकि मेरी माँ भी विधवा और उसकी माँ भी विधवा। जब तब उसकी शादी नहीं होगी तब तक मैं शादी ही नहीं करूँगा। और सचमुच उन्होंने वैसा ही संकल्प किया था।

संयोग से सूरजभान को अपने ही तहसील के कृषि विभाग में अस्थाई नौकरी लग गई थी। उसकी मां की खुशी का तो कोई ठिकाना हीं नहीं रहा। वह अपने लाडले बेटे को लाड़ प्यार से खूब चूम लेती थी। वह अपने बेटे के साथ रंग-बिरंगी जीवन के नाना सपने देख रही थी। उसे उसके सारे मनोरथ पूरे होते नजर आ रहे थे। वह यशवंत बाबा तथा बाबासाहेब आंबेडकरजी के लाख-लाख शुक्र मान रही थी। उसे अपने जीवन की सारी पीड़ा दुख यातना से मुक्ति और सुखमयी जीवन दिखाई दे रहा था। उसे अपने जीवन के संपूर्ण त्याग अब सुवर्ण दिनों में तब्दील होता हुआ सा नजर आ रहा था। कभी-कभी वह अपने बेटे सुरजभान की शादी शुदा ग्रहस्थी जीवन की खुशियों की कल्पनाओं में रममान होने लगती थी। उसके सूखे पेड़ पर बसंत की सी बहार दीख रही थी। परन्तु यह किसे पता था कि यह केवल मायारूपी काल का क्षणिक अभास मात्र है। उस विधवा की यह खुशी विधाता को शासद मंजूर नहीं थी। सूरजभान की नयी नयी नौकरी थी। वह अपने जीवन की सारी खुशिया अपने माँ मौसी नाना सभी परिजनों को देना चाहता था। उसे तीन महीने की पूरी तनखा एक साथ मिली थी। इस साल की भीम जयंती (डॉ. अम्बेडकर जयंती) वह बड़ी धूमधाम से मनाना चाहता था। उस दिन वह बड़ी खुशी-खुशी से दफ्तर के लिए घर से निकला थ। तहसील उसके गाँव से दस पन्द्रह मील की ही दूरी पर था। दोपहर के बाद उसने दफ्तर छुट्टी ले ली। शाम के पाँच-साढ़े पाँच बजे तब उसने खूब बाजार किया। नाना माँ मौसी भाई चाचा-चाची चचेरी बहन सभी के लिए उसने अच्छे-अच्छे कपड़े खरीद लिए। भीम जयंती के लिए जरूरी सामान खरीद लिया और गाँव की ही एक जीप में सारा सामान डाल दिया। वह भी उसी में बैठकर गाँव आने वाला था। लेकिन उतने में उसे अपनी भाई बिरादरी का लड़का मोटर बाईक पर मिला। उसने सूरजभान को मोटर बाईक पर बैठकर गाँव चलने का आग्रह किया। जिसे वह नाना करते करते भी टाल नहीं सका।

शायद यह उसे काल का आमंत्रण था, जिसे वह चाहकर भी टाल न सका। काली घनी रात का अंधेरा छा रहा था। दोनों मोटर बाईक पर बैठकर हाइवे पर सरपट दौड़ रहे थे। उस समय रोड पर डिवाइडर नहीं थे। उसका मित्र गाड़ी चला रहा था। सामने से आ रहे वाहन के हेड़ लाईट की रोशनी की चमक से उसकी आंखें चौंध गई। वह अपना संतुलन खो बैठा और पलक झपकते ही ॲक्सिडंट हो गया। कुछ ही समय में पीछे से उनके गाँव की जीप भी आ गई, जिसमें सूरजभान का सारा सामान था। उसने खरीदे हुए उसके नये-नये कपड़े मानों उसके वे कफन बन गये। उसी जीप में डालकर वापस तहसील के अस्पताल में भर्ती कराया गया। गाँव में इस बात की खबर पहुँची तो गाँव के कुछ लोग दौड़े-दौड़े अस्पताल पहुंचे। गुणवती अपने बेटे का देर रात तक इंतजार करती रही और अंत में बहुत सुनहरे सपनों को आंखों में लेकर कब सो गई। सुबह उठकर वह अपने आंगन की झाड़ लोट कर रही थी। तब उसका पड़ौसी जो रिश्ते से उसका देवर लगता था। वह बार-बार उसके घर के आंगण तक खबर देने आता किन्तु उल्टे पाव वापस लौटता। वह उसे उस इन मनहुस खबर से विदित करे तो कैसे करे? यह खबर रातों-रात रिश्तेदारों के गांवो में पहुंची। जैसे-जैसे सूरज चढ़ता गया, वैसे-वैसे मेहमानों का तांता उसके घर में बढ़ता गया। फिर भी वह बेखबर थी कि

उसका सूरज अब लुप्त हो गया है। वह मेहमानों को चाय बनाने के लिये चुल्हा सुलगाने लगी। तब उसके देवर को रहा न गया। उसने बताया भाभी सूरजभान का रात में ॲक्सिड़ंट हो गया है। तब उसने कहा, नही रे बाबा उसने मुझे कहा था कि मैं भीम जयंती का बाजार करने जा रहा हूँ। रात में देर हो गई तो वहीं रूकँगा। अभी वह आयेगा तुम झूठ बोल रहे हो। घर में महमानों की भीड़ बड़ती गई। गुणवती अब अवाक-सी हो गई। और मातमी माहौल में कब अचेत हो गई, फिर क्या हुआ उसे कोई खबर नहीं दूसरे दिन दोपहर उसकी लाश गाँव लाई गई। घर में कोहराम मच गया। मातमपूर्सी के बाद सब मेहमान इधर-उधर गए। गुणवती अब विक्षिप्त सी हुई। कई दिनों तक वह तहसील से आने जाने वाले से पूछ-ताछ करती कि उन्हें सूरजभान मिला था क्या? वह भीम जयंती के लिए बाजार करने गया था। इस बात को अरसा गुजर गया। उसकी जिंदगी चल रही रही बल्कि दीमक की तरह मिट्टी का लबादा ओढ़े रेंग रही है। बड़े चाचाजी मात्र इस हादसे को सहन कर नहीं पाये। पूरी तरह से वे अब गल गये और कुछ सालों के भीतर उन्होंने इस दुनिया से विदा ले ली। बड़े चाचाजी के प्रारब्ध के बारे में सोच-सोचकर मेरे मन में रह-रहकर यह पंक्तियां उभरती है-

"आदमी SSS खिलौना है।2
जब चाहा बना दिया,
जब चाहा तोड़ दिया।
किस्मत का मारा है, आदमी SSS"

डॉ0 एम0डी0 इंगोल
(हिंदी विभागाध्यक्ष)
कला, वाणिज्य एवं विज्ञान महाविद्यालय
गंगाखेड जि0 परभणी- 431514
Email-ingolemunjaiji@gmail.com

ग़ज़ल

शत्रुता वो निभाने लगे, मित्र बनके वो आने लगे।
साफ-सुथरे थे जो रास्ते, उनपे काँटे बिछाने लगे।
दौड़कर शख्स जो भी चला, मार लँगड़ी गिराने लगे।
शीश जिसने उठाया जरा, धड़ से सर ही हटाने लगे।
जबरा पीटे और रोने न दे, रात दिन यों सताने लगे।
चल रहा था मिशन भीम का, उसको जड़ से मिटाने लगे।
अपने लोगों को क्या हो गया, हाँ में हाँ जो मिलाने लगे।।

- डॉ0 सुरेश उजाला
108, तकरोही, मायावती कालोनी रोड
इन्दिरा नगर, लखनऊ

सतह से उठते हुए

- डॉ0 एन0 सिंह

सतह से उठते हुए,
मैने जाना कि -
इस धरती पर किए जा रहे
श्रम में
जितना हिस्सा मेरा है
उतना ही हिस्सा
इस धरती के
हवा, पानी और
इसमें उत्पन्न होने वाले
अन्न और धन में भी है।
अब समझ गया हूँ
उस अंकगणित को
जिसके कारण मेरे श्रमकण
मिट्टी में मिलकर
दूसरों की झोली को
मोतियों से भर देते हैं और-
मेरी झोली में होती है
भूख, बेबसी और लाचारी
इसलिए अब मेरे हाथ की कुदाल
धरती पर कोई नींव खोदने के पहले
कब्र खोदेगी उस व्यवस्था की
जिसके संविधान में लिखा है -
"तेरा अधिकार सिर्फ कर्म में है,
श्रम में है
फल पर तेरा अधिकार नहीं।"

('सतह से उठते हुए' से साभार)